अंतरा-शब्दशक्ति

कुछ सूखे कुछ हरे पात

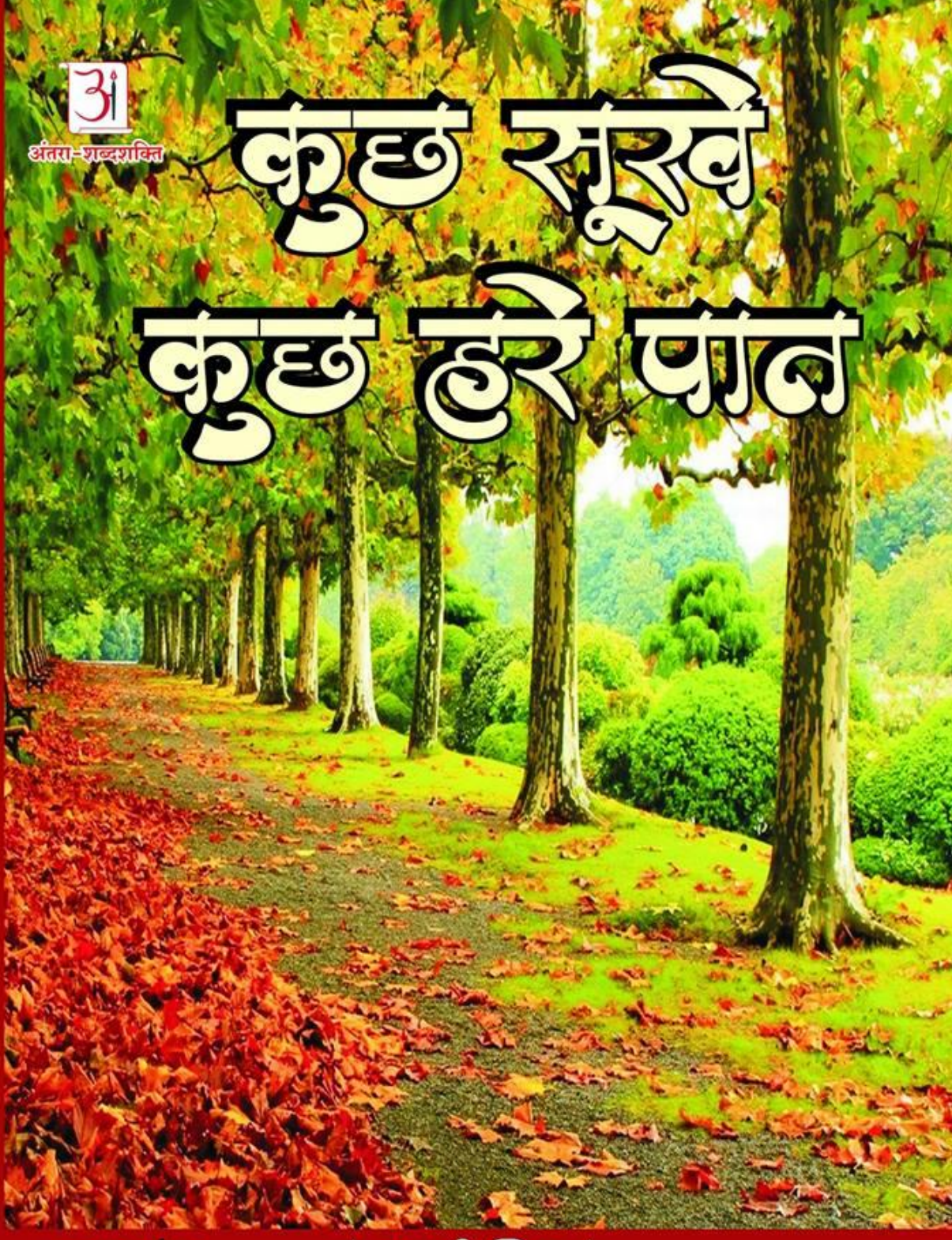

कथा संग्रह

★ माधुरी मिश्रा ★

कुछ सूखे कुछ हरे पात

(कथा संग्रह)

माधुरी मिश्रा

अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन

इंदौर,मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-88102-06-3

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
कार्यालयनेहरु चौक वारासिवनी १५ :,जिला बालाघाट ४८१३३१ (प्र.म)
शाखा२०७-एस :, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर ४५२००१ (.प्र.म)
दूरभाष९४२४७६५२५९ मो २५३१५९-०७६३३ (कार्या) :
अण्डाक -antrashabshakti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण २०१८ © माधुरी मिश्रा
मूल्य: ४०.०० रुपये
आवरण चित्र : कर्नल सौमेंद्र पांडेय, नई दिल्ली
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

'kuch sukhe kuch hare paat' by 'madhuri mishra'

वैधानिक चेतावनी : इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है | लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुरुत्पार्दित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता हैं |प्रस्तृत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई हैं | अत : प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु प्रत्येक लेखक जिम्मेदार हैं| प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र,भाषाशैली,एवं स्थान सभी लखक की कल्पना हैं | किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं हैं|

समर्पण

मेरे पति स्वर्गीय, गोलोक नाथ मिश्र को समर्पित...

जिन्होंने मुझे जीवन के प्रति नयी दृष्टि प्रदान की।

जीवन-पथ पर चलते हुये अनेक व्यक्तियों से मिलना हुआ, अनेक घटनायें घटित हुयी, कुछ तो स्मृति -पटल से लुप्त भी हो गयी, कुछ ने मन पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ा और बहुत कुछ सोचने को विवश किया।

मन-मस्तिष्क जब भावनाओं, विचारों में डूब जाता है, तब शब्दों का रूप धर किसी न किसी विधा में, वह कागज पर रचना का रूप ले उतरने लगता है।

घर-परिवार, समाज, नाते-रिश्ते हमेशा से मुझे प्रभावित करते रहे हैं। जीवन में बहुत कुछ देखा, सुना, अनुभव किया, कभी हार्दिक प्रसन्नता मिली, तो कभी पीड़ा, और कभी -कभी मन क्रोध, विस्मय से भर भी उठा, दूसरों के प्रति भी, और स्वयं अपने लिये भी कि -'क्या मैं भी ऐसा कर सकती हूं, सोच सकती हूं?' किन्तु सत्य तो यही है कि यह जीवन है, और जीवन में कुछ भी असंभव नही ।

मानव-जीवन, और जीवन का संघर्ष मुझे बहुत आकर्षित करते हैं, मैने संघर्ष को हमेशा चुनौती के रूप में ही माना है। जुनूनी लोग भी बहुत खास होते हैं।

दूरदर्शिता, परोपकार, प्रेम, दया, सहन-शीलता आदि ही तो ऐसे गुण हैं , जो जीवन को सही अर्थों में सफल बनाते हैं। इन कहानियों के पात्र शायद हमें अपने जीवन और समाज में ही कहीं न कहीं मिल जायें। मैं अंतरा शब्दशक्ति का आभार मानती हूं , जिसने वर्षों से शिथिल पड़े मेरी रचनाधर्मिता को चेतना दी।

अंत में, हार्दिक आभार मेरे पोते चिरंजीवी अक्षत को... जिसने मुझे नयी तकनीक से अवगत कराया और मेरी रचना-धर्मिता साकार हो सकी.

माधुरी मिश्रा

जबलपुर

अनुक्रमणिका

1. संघर्ष	5
2. पद-चाप	6
3. परोपकार	8
4. मन की शान्ति	10
5. प्यार या बिगाड़	11
6. आत्म-संतुष्टि	12
7. प्रयास	13
8. शंका	14
9. कर्मफल	15

संघर्ष

'प्रणाम दादी' सुनते ही मैने समाचार पत्र से नजरें उठाई तब तक वह मेरे पैरों तक झुक चुकी थी, मैंनेउसे उठाते हुये बांहों में भरा और आश्चर्य से बोल पड़ी - "रमा तुम! कब आई ससुराल से?" रमा ने हंसते हुये कहा-

"कल रात, आप से मिले बिना चैन कहां पड़ता"

"जानती हूं, ये तो बता ससुराल में सब ठीक तो हैं ना?" मैने उसे सामने बैठाते हुये पूछा।

रमा ने हाथ के झोले से मिठाई का पैकेट निकाला और एक काजू कतली मेरे तरफ बढ़ाती हुई बोली - "पहले

आप मुंह तो मीठा कीजिये।"

"अरी कुछ बतलायेगी भी" कहते हुये मैने आधी मिठाई तोड़कर मूंह में रख ली।

"मेरा काम परमानेन्ट हो गया दादी " चहकते हुये बोल पड़ी रमा।

"शाबाश, बहुत बढ़ियां!" मैने कहा और हाथ की आधी मिठाई उसके मुंह में डाल दी।

अब रमा ने हाथ का झोला मिठाई के पैकेट के साथ मेज पर रखा और मुझसे बोली - "ये आपके कपड़े हैं दादी, मां ने दिये हैं।"

मैने झोले से कपड़े निकाले, मेरे पेटीकोट और ब्लाउज़ थे जो मैने रागिनी, यानी रमा की मां, को सिलने के लिये दिये थे।

बहू आवाज सुनकर बाहर निकली , रमा उसके साथ बातें करती हुई अंदर चली गयी और मैं सोचने लगी ,रमा के परिवार के वारे में -समय भी कैसे - कैसे रंग बदलता है। आदमी का मन और समय को बदलते देर नहीं लगती। पन्द्रह साल हो गये, मदन अपनी पत्नी, चार साल का बेटा, विधवा मां और छोटी बहन- जो उस समय दसवीं की परीक्षा दे चुकी थी, को लेकर पटना आया था। मदन के पिता जो सूरत में कहीं किसी निजी संस्थान में थे, वहीं एक सड़क दुर्घटना में मारे गये थे, और अब परिवार की पूरी जिम्मेवारी मदन की ही थी, इसलिये पटना के सरकारी विद्यालय में नियुक्ति मिलते ही वह परिवार सहित पटना आ गया और मेरे ही मुहल्ले में एक छोटा सा घर किराये पर लेकर रहने लगा।

मदन का घर और मेरा मायका एक ही जगह है, और मदन के पापा गांव के रिश्ते से मुझे बुआ कहते थे, इसलिये रागिनी मुझे बुआ जी और उसके बच्चे मुझे दादी कह कर बुलाते थे। मदन के सामने चुनौती थी घर परिवार चलाने और बहन की शादी की ।

मदन की पत्नी बारहवीं पास थी, वह भी घर पर छोटे-छोटे बच्चों को पढ़ाने लगी, समस्या तो तब आई जब रमा ने आगे पढ़ने की इच्छा दिखाई और मां ने भी उसका समर्थन किया।

भाभी की इच्छा थी कि किसी तरह उसकी शादी कर दी जाय, और एक काम खतम हो। अनिच्छा से ही भाई ने भी पढ़ने की सहमति दे दी, और रमा की आगे की पढ़ाई शूरू हो गयी, लेकिन घर का वातावरण तनाव पूर्ण हो गया।

मुझे पता था कि रागिनी सिलाई, कढ़ाई और बुनाई में निपुण है ,मैने उसे ये सब काम और्डर पर लेकर करने के लिये प्रेरित किया, सबसे पहले अपने ही घर के ढेर सारे काम दिये, और उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया, फिर मैने सगे-सम्बन्धी, पड़ोसी और परिचित सबको बतलाया उसका काम दिखायाऔर सबसे उसे और्डर दिलवाया।

रागिनी का काम अच्छा चलने लगा, वह बेटी की पढ़ाई का खर्चा तो उठाने ही लगी, कुछ पैसे उसने जोड़ भी लिये जो शादी में काम आये।

मैने उसे सलाह दी थी कि किसी भी स्थीति में वह रमा की पढ़ाई नहीं रूकने देगी।

रमा ने ग्रैजुएशन किया, उसकी शादी भी अच्छे लड़के से हुई। ससुराल में सासुमां के आगे-पीछे करके किसी तरह उसने बी०एड० की डीग्री भी ले ली, और आज वही रमा मेरे सामने खड़ी थी, मिठाई लेकर।

जीवन में कभी हार नहीं माननी चाहिए, संघर्ष को चुनौती रूप में स्वीकार कर आगे बढ़ने वालों की ही जीत होती है।

****

पद-चाप

डा० मंजुला गाड़ी के पिछली सीट पर बैठी, ड्राइवर ने स्टेयरिंग सम्भाली और गाड़ी चल पड़ी। ड्राइवर के सधे हाथों और चौकस निगाहों के साथ गाड़ी आगे बढ़ रही थी, मंजुला ने सिर पीछे टिका अपने शरीर को ढीला छोड़ दिया, उसके मन में विचार उठ रहे थे ,चिन्ता हो रही थी कि एक घंटा तो लगेंगे ही घर पंहुचते-पहंचते, उसपर दिल्ली की यातायात व्यवस्था ,जाम ये सब तो रोज की बातें थी। घर पहुच कर खाना भी तो बनाना था क्यों कि खाना बनाने वाली बाई दो दिन से आ नहीं रही , सासूमां यदा कदा खाना बना तो लेती थी पर अब उनकी भी उमर हो चली थी, कल रात भी उन्होने ही खाना बनाया था पर सुबह से उनकी तबियत खराब थी ।

आज सुबह खाना बना खाने की मेज़ पर रख आते -आाते मंजुला ने कई बार सासूमां से कहा-' आप समय से खाना खा लेंगी और दवा भी, मैं आकर खाना बनाऊंगी'।

मंजुला पिछली यादों में खो गयी , अभी साल भर ही तो हुये हैं, उसकी शादी को,उसके ससुर जी डा०अतुल सिंह ने ,जो स्वंय शहर के ख्याति प्राप्त चिकित्सक थे अपने प्रोफेसर बेटे के लिये उसे पसन्द किया, और प्रोफेसर बेटे ने दो महिने के अन्दर ही उससे शादी कर घर की बहू बना दिया। मन ही मन हंस पड़ी मंजुला कितना डर था उसे, वह तो चिकित्सक बनकर एक अच्छे अस्पताल में कार्यरत थी, अच्छा था सबकुछ वहां ,पता नहीं ससुराल में कैसा वातावरण मिलेगा अंग्रेजी साहित्य के डा०उसकेपति अमन सिंह , उसे और उसके काम को कितना समझ पायेंगे?, एक दो मुलाकातों में वह समझ नहीं पाई थी अमन को, लेकिन अपने पापा के इच्छा के सामने वह चुप रही, क्योंकि वे बड़े आश्वस्त लग रहेथे बेटी के भविष्य को लेकर। ससुराल में सबकुछ इतना सहज , सरल और प्रेमपूर्ण था कि उसे तनिक भी असुविधा नहीं हुयी ।

डा०साहब ने जब अपने एकमात्र पुत्र की रूचि चिकित्सा के बदले साहित्य में देखा तो उन्हें झटका तो लगा, उन्होने अपने चिकित्सक पिता से विरासत के रूप जो छोटा सा क्लीनिक पाया था ,और अपनी बुद्धि मेहनत तथा ब्यापारिक कौशल के बल पर उसे एक अच्छी पहचान दिलाई थी, उससे उन्हें गहरा लगाव हो गया था ,वे चाहते थे कि चिकित्सक बनकर, अमन भी उस विरासत को संभाले, लेकिन बेटे ने दूसरा रास्ता चुना, तो डाक्टर बहू ले आये। सब कुछ अच्छा चल रहा, मंजुला बीच बीच में ससुर जी के साथ क्लीनिक भी जाती थी कि अचानक एक दिन ससुर जी को भयानक हृदयाघात हुआ , उनको संभलने का अवसर दिये बिना ही,सांसे उखड़ने लगी ,पत्नी ,बेटा,बहू सब घबड़ाये सामने खड़े थे,उन्होने मंजुला का हाथ पकड़ा-'बहू'अस्पष्ट आवाज आई, मंजुला ने कस कर हाथ पकड़ा ,औरदूसरे ही पल डा०सिंह की हृदय की धड़कन शान्त हो गयी ।

'मैडम घर आ गया' ड्राईवर था।

मंजुला वर्तमान में लौटी, भींगी आंखे पोंछकर अंदर गयी तो सामने सास और पति को सोफा पर बैठे देख उसने सास से पूछा-'मांजी आपकी तबीयत ठीक तो है न?, मुझे देर तो हो गयी ,लेकिन मैं खाना बनाती हूं'।कहकर वह तेजीसे बेडरूम की तरफ गयी ।कपड़े बदल,हाथपांव धो पोंछ जब वह वापस आयी तो देखा-उसकी सास खाने के मेज के पास बैठ चुकी थी , और पति हाथ में सब्जी का डोंगा लिये रसोई से बाहर आ रहे थे , भीतर जाकर देखा तो दाल, रोटी ,सलाद सब तैयार था ।दाल ,रोटी उसने मेजपर रखा और तनिक रोष से बोल पड़ी-' आपने मेरी बात नहीं मानी न , मां

जी तबीयत ज्यादा खराब हो जायगी तो?' 'लेकिन मैने तो कुछ भी नहीं किया है,ये खाना तो अमन ने बनाया है' सासू मां बोलपड़ी । अब आश्चर्यचकित होने की बारी मंजुला की थी,-'आपने?' 'हां क्यों नहीं मुझे तो मम्मी ने सब कुछ बनाना सिखलाया है ताकि कभी भूखा न रहना पड़े'। प्लेट अपने आगे खींचता, अमन बोल पड़ा । कितने समझदार थे पापाजी और कितनी अच्छी हैं मांजी कि इन्होने समय की पद-चाप समझ ली , सोच रही थी मंजुला ।

****

परोपकार

जनवरी की सर्द सुबह थी, मकरसंक्रान्ति के चार दिन बित चुके थे, लेकिन ठंढ कम होने का नाम ही नहीं ले रही थी। मकरसंक्रान्ति के बाद ठंढ कम होने लगती है, लेकिन इस बार तो हाल ही दूसरा है।
साढ़े सात बज चुके हैं, सूरज अभी तक निकला नहीं और सर्द हवायें चल रही है। बाहर से घंटी बजी ,मैने झट से दरबाजा खोला,गीता होगी तो अभी चाय नहीं बनानी पड़ेगी, तुरन्त अदरख वाली गरम चाय बना कर ले आयगी।

हां ,गीता ही थी ,शाल से मूंह कान ढंके, हाथ का समाचारपत्र मेरी ओर बढ़ाते हुये (जो वह आते समय फाटक पर से उठा लायी थी),
उसने एक नज़र मेज़ पर डाली और सीधे रसोईघर में घुस गयी ।

पांच मिनट में ही वह एक ट्रे में चाय और एक गिलास गुनगुना पानी रख गयी, फिर स्वयं भी गिलास में चाय ले पीने लगी ।

यह उसका नित्य का नियम था, आती पहले मुझे चाय देती आराम से चाय पी कर वह रसोई और बरतनों मे लग जाती, उसे मालूम था,सुबह उठते ही मैं केवल अपने लिये चाय कभी नहीं बनाती।

मैं रसोई में गयी उसे कुछ बतलाने , तो देखती हूं वह जल्दी -जल्दी अपने काम में लगी हुई है , गैस को साफ कर अब स्लैब को पोंछ रही है,और बार- बार अपने शाल को भी संभाल रही है ।

"गीता क्यों शाल गंदा कर रही हो ?"मैने उससे पूछा,उसने कोई जबाब नहीं दिया और अपने काम में लगी रही।

"फुर्ती करो अभी मुझे खाना भी बनाना है , फिर तैयार होकर स्कूल भी समय पर पहुंचना है , वैसे भी तुम आज लेट हो।" मैने दीवाल पर टंगी घड़ी की तरफ देखते हुये कहा। उसने भी एक नज़र घड़ी पर डाली,और जल्दी से शाल उतार दरबाजे पर लटका दी, और अपना काम करने लगी ।

अब चौंकने की बारी मेरी थी , ब्लाउज़ पर एक हाफ स्वेटर पहने , पल्लू को कमर में खोंसे वो बर्तन साफ करने लगी थी ।

"तुम्हारा हुड वाला कार्डिगन कहां गया गीता, कल भी तुम नहीं पहन कर आयी थी ,और आज तो बहुत ही अधिक ठंढ है!" मैने उससे कहा ।

वह सिर झुकाये बर्तन धोती रही,धीरे से कुछ बोली जो मेरी समझ नहीं आया।

"फैसनेबल कार्डीगन पहन काम पर आने में तुम्हें शर्म आती थी, इसलिये मैने अपनी बेटी के सुन्दर गर्म कार्डीगन के साथ ही अपना गर्म शाल भी दिया,ताकि तुम रास्ते में शाल ओढ़ कर निकलो और तुम्हें ठंढ भी नहीं लगे लेकिन तुम तो--"नहीं मां, ऐसी कोई बात नहीं है",बीच में ही बात काटते हुये गीता बोल पड़ी-"वो स्वेटर मैने अपने पड़ोस वाली बुढ़ीया चाची को पहना दी, परसों शाम मैं काम से लौट रही थी तो यूं ही उसकी कोठरी के सामने से निकलते हुये मैने उसकी कुछ आवाजें सुनी, मुझे लगा कि देखें किससे बातें कर रही है, भीतर गयी तो देखा ,चारपाई पर अपनी रजाई चारो ओर से लपेटे वह गठरी बनी बैठी है, मुझे देखते ही बोल पड़ी- "देखो न रजाई से भी ठंढ नहीं जाती,अब मैं क्या करूं।"

सच में वह कांप रही थी, मुझे कुछ समझ नहीं आया। मैने अपना स्वेटर खोला और रजाई हटा कर उन्हें पहना दी ,यह कहते हुये कि- "चाची ये स्वेटर बहुत गर्म है ,अब आपको ठंढ नहीं लगेगी" रजाई चारो तरफ से लपेट कर उन्हें सुला दिया और स्वयं वहीं बैठ गयी, जल्द ही उनका कांपना बन्द हो गया ।मैं घर जाने के लिये उठी तो चाची ने मुझे और मेरे बच्चों के नाम ढेर सारी दुआयें दी । मेरी हड्डियों में तो जान है, अस्सी साल की बुढ़ी को यूं कंप -कपाते देख मुझे दया आ गयी , मैं कुछ और कर भी तो नहीं सकती थी। उसने बड़ी मायूसी से कहा,और झाड़ू से नीचे का फर्श साफ करने लगी ।

मैं चुप -चाप वहां से कमरे में चली आई , आलमारी खोल कर अपना एक कार्डीगन निकाला और सीधे उसके पास जाकर देते हुये बोली -"ले पहन ले फिर काम करती रहना, बीमार पड़ोगी , तो फिर मेरी ही मुसीबत होगी ।" उसने एक बार अकचका कर मेरी तरफ देखा,फिर मेरे हाथ से कार्डीगन लेकर पहन ली ।

मैं सोच रही थी कितनी दया और करूणा है इसके मन में। जिसके पास कई हैं वो एक निकाल कर जरूरतमंद को दे दे, तो कोई बात नहीं । लेकिन पहने हुये स्वेटर उतार कर किसी को दे देना उतना आसान भी नहीं है । दया, उदारता से परिपूर्ण व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है । यही सब सोचते हुये मैं बाथ-रूम में घुस गयी ।
स्नान कर बाहर निकली तब तक गीता सारा काम खतम कर शाल ओढ़ कर दरबाजे के पास खड़ी थी,

"मां मैं जा रही हूं। "कहते हुये गीता बाहर निकल गयी । और मैं सोच रही थी -'मैं यदा-कदा गीता को उसकी आवश्यकतानुसार कपड़े ,रूपये-पैसे या कोई भी सामान देती ही रहती हूं ,लेकिन सच कहूं तो केवल दया या सहानुभूति वश ही नहीं ,इसमें मेरा स्वार्थ भी रहता है । मुझे लगता रहता है कि वह स्वस्थ ,संतुष्ट रहेगी तभी तो मेरा काम प्रसन्नता से निर्विघ्न करती रहेगी । लेकिन यह तो दया अथवा परोपकार नहीं है। परोपकार तो गीता जैसी स्त्रियां करती हैं, जो बिना सोचे समझे सामने वाले के दुख से दुखी होकर कुछ भी करने को तैयार हो जाती है ।

****

मन की शान्ति

'मां हम लोगों का आज रात के ट्रेन में रिजर्वेसन है,. रमा तुमने तैयारी कर ली न? राजेशने पत्नी की तरफ मुड़ते हुये पूछा ।

मां कुछ बोलती या रमा के बोलने से पहले ही, सोमेश तेजी से बोलपड़ा-' अच्छा तो आप लोग आज ही निकल रहे हैं, हमें भी कल सुबह निकलना है , मैंतो सोच रहा था, सबसे पहले मैं निकलूंगा , किन्तु भैया तो बड़े तेज निकले, और वह हंस पड़ा।

रेवती समझ ही नहीं पाई कि अभी तेज बनने या हंसने की क्या बात है, वह बारी -बारी से दोनो बेटों का मूंह निहार रही थी, उसे कुछ भी समझ में नहीं आरहा था। 'हां अब रूक के क्या करना है? पापा के अंतिमसंस्कार के सारे कर्मकांड तो कल खतम हो ही गये।' राजेश बोला। 'मुझे लगता था आप दो चारदिन रूकेंगें मां के पास' यह सोमेश था।. लेकिन इतना सुनते ही राजेश सोफे से खड़ा होते हुये तेज स्वर में बोल पड़ा- 'ऐसा कैसे सोच लिया तुमने , तुम्हारी सरकारी नौकरी है तो बड़े आदमी बन गये और मेरा अपना काम है तो कुछ नहीं '। मुझे तो छुट्टी नहीं मिलेगी ,और न रंजना को ही, नहीं तो मैं रंजना को मां के पास छोड़ जाता' मायूसी भरे शब्दों में बोला सोमेश।. 'कर नहीं सकते तो बोलते क्यों हो?' राजेश तल्ख स्वर में बोल पड़ा, 'मैं तो केवल' सोमेश के मुह से इतने ही शब्द निकले थे, कि रेवती ने मौन तोड़ा-'क्या बेकार की बातों में उलझ रहे हो दोनों, तुमने पूछा एकबार भी कि मुझे क्या चाहिये? तुम्हारे पापा चले गये मैं तो हूं अभी, अभी से मनमौजी शूरू कर दी दोनों ने, मेरे हाथ पैर दिमाग सब सलामत हैं, नहीं चाहिये कोई मुझे '।

एक ही सांस में सबकुछ कहकर मौन हो गई रेवती, सिर को पीछे सोफे पर टिका लिया , दोनों भाई लपक कर मां के पास पहुंचे, रेवती ने दोनो के सिर पर एक एक हाथ रखा और तीन जोड़ी आंखों से निकल अश्रुधारा एकदूसरे को भिंगोने लगी । कमरे में मौन पसरा था लेकिन मन की शान्ति के साथ।

****

प्यार या बिगाड़

सुमन जल्दी-जल्दी घर का सारा काम निपटा कर बाथ-रूम से निकल स्कूल जाने के लिये तैयार हो रही थी कि, तभी आवाज आई- "कहां हो बहू क्या कर रही हो?" आवाज सुनते ही तम-तमा गया सुमन का चेहरा, लेकिन यथासाध्य स्वर को कोमल बनाते हुये, बोल पड़ी-"आप बैठिये चाची मैं अभी आयी।"

सुमन अपना बैग भी ठीक कर रही थी और बेटी को भी आवाज लगा रही थी-" मिन्नी, अपना बैग ठीक करो, लंच-बौक्स ले जाओ।" कोई जबाब नहीं पा सुमन तेजी से बाहर वाले कमरे में आयी तो देखती क्या है कि दादी-पोती सोफे पर पसरी गप्पें लड़ाने में व्यस्त है। मिन्नी ने तो अपना बैग तक ठीक नहीं किया है, जूते मोजे भी नहीं पहने हैं। सुमन ने घड़ी देखी, समय हो रहा था स्कूल पहुंचने का, उसने मिन्नी को खींच कर सीधा किया और डपट कर बोली-"जल्दी जूते पहनो और चलो, लेट हो जाओगी स्कूल में, सजा मिलेगी।" मिन्नी ने सुबकना शूरू कर दिया, आंसू गिरने लगे टप-टप।

अब दादी ने तुरन्त उठकर मिन्नी का हाथ पकड़ लिया और बोली- "रोओ मत, आज स्कूल मत जाओ, मेरे घर चलो, साथ खेलेंगे।"

"नहीं"- सुमन ने स्पष्ट शब्दों में कहा, और जल्दी से उसकी किताबें समेट बैग में धर दी, घर की चाभी लेते हुये उसने स्कूटी निकाली, पीछे -पीछे चाची और मिन्नी भी बाहर आ गयी। "प्रणाम चाची फिर मिलते हैं शाम में"। कहते हुये उसने स्कूटी स्टार्ट की मिन्नी को सहारा देकर आगे बैठाया, और बढ़ गयी आगे। सुमन स्कूटी चला रही थी और उसके मन में बिचारों का रेला चल रहा था, पिछले तीन साल उसने कैसे निकाले हैं, क्या-क्या नहीं सहा , किया ,उसने अपनी शिक्षिका की नौकरी बचाने के साथ-साथ, नवजात को पालने के लिये। यह तो एक अलग ही कहानी है। इस चाची ने , उसके पति के सगी चाची ने, कभी भी उसकी समस्यायों को नहीं समझा, एक ही मकान के दूसरे भाग में रहते हुये भी। एक घंटे के लिये भी वह कभी मिन्नी को अपने पास रखने के लिये तैयार नहीं होती, और आज वही चाची मिन्नी को इतना लाड़ दिखा रही है, यह लाड़ नहीं बिगाड़ है।

सुमन का मन खिन्न हो गया, उसने दृढ़ निश्चय किया कि वह अपने परिवार में चाची को हस्तक्षेप नहीं करने देगी। वह साहस और धैर्य से अपने परिवार और नौकरी दोनो ही सफलता से संभालेगी।

****

आत्म-संतुष्टि

अभी सप्ताह भर पहले की बात है, मैने अपनी कार पार्किंग में अपनी जगह पर खड़ी ही की थी, कि एक दूसरी कार सामने के खाली जगह में आ लगी और उसमें से जो ब्यक्ति निकला उसे देख मैं कुछ असमंज में पर गई-'वही है या कोई दूसरा, लगता तो अनिल जैसा ही है', इतने में वह मेरी तरफ मुड़ा, मुझे देखते ही मुस्कुराया, 'अरे दीदी आप' और उसने दोनो हाथ जोड़ लिये,अब असमंजस की वजह ही नहीं थी। मेरी आँखों के सामने बुआ के देवर का बेटा अनिल खड़ा था, जिसे मैने बीस साल पश्चात अभी -अभी देखा है,. वह तो मेरी कल्पना से बिल्कुल अलग था, खैर मुझे पता चला कि वह भी सपरिवार उसी अपार्टमेंट के तीसरे फ्लोर पर रहताहै, मैने दूसरे दिन रात्रि भोजन के लिये उसे सपरिवार निमंत्रित किया।

घर आकर मैं फिर सोचने लगी क्या यह वही लड़का है, जिसे मैं बचपन से जानती थी, जब भी हमसब भाईबहन शहर से बुआ के ससुराल उसके गांव जाते तो बड़े खुश होते, चारो तरफ खुली जगह, आम का बगीचा, हरे भरे खेत । पूरे दिन मस्ती करते ।बुआ के घर के सारे बच्चे उसमें शामिल होते ,एक अनिल को छोड़कर, जब हम उसे खोजते तो वह घर के पिछवाड़े या बगीचे में खुरपी या पानी का बाल्टी लिये मिलता ,हम उसे पकड़ कर ले आते ,लेकिन वह फिर खिसक जाता । नये पौधों को लगाने का, सार सम्हाल का जुनून सवार रहता उसपर ,पढ़ाई में भी पीछे नहीं रहता ,लेकिन कपड़े मिट्टी पानी से गंदे रहते । रंग तो सांवला था ही ऊपरसे मिट्टी सने।आज वही लड़का मेरे सामनेखड़ा था ,आकर्षक व्यक्तित्व सुंदर वेषभूषा और सभ्य सुंदर सोसायटी का निवासी।

दूसरे दिन रात्रि में वह सपरिवारआया ,सबको देखकर बहुत अच्छा लगा, बातों ही बातों में मालूम हुआ ,स्नातक अंतिम वर्ष में था ,जब उसके पिता चल बसे, मां की जिद्दपर उसने पढ़ाई तो पूरी की ,लेकिन फिर उसने गांव में रहना ही पसंद किया। आधुनिक उन्नत ढंग की खेती ने अन्न, और आम के बगीचों ने यश के साथ पैसे भी प्रचुर मात्रा में दिये, वो तो पत्नी के जिद्द पर , बेटियों की पढ़ाई के लिये, शहरमें रहने का एक ठौर ले लिया, मन तोअभी भी बाग बगीचे और खेत-खलिहानों में ही रमता है। उसके चेहरे परआत्म- संतुष्टि और प्रसन्नता की स्पष्ट छाप थी, और मुझे भी बहुत अच्छा लग रहा था।

****

प्रयास

"मां चलिये न" बहू पूजाघर के दरबाजे पर तैयार होकर हाथ में आम का छोटा सा बिरबा लिये खड़ी थी, जो वह कल शाम ही आते समय नर्सरी से ले आयी थी । "चलो न मां , फिर वहां से आकर मुझे अस्पताल भी जाना है।" मेरा बेटा भी आकर खड़ा हो गया था।

"हां चलो वहां से आकर ही मैं घर में पूजा करूंगी।"

मैने पूजा की थाल उठाई और सबके साथ गाड़ी में बैठ गयी ।

देवी मां के मंदिर में जाकर पहले तो मैने पंडित जी को कह कर बेटा-बहू को साथ -साथ मिलकर देवी मां की पूजा करबाई, फिर बेटा के हाथ से बहू के मांग में सिन्दूर भरवायी। आज उन लोगों की शादी की सालगिरह जो है, फिर दोनो ने सुखमय दाम्पत्य जीवन के लिये माथा टेककर प्रणाम किया।

मैने भी देवी की पूजा-अर्चना की और पंडित जी को दक्षिणा देकर बेटा-बहू को हमेशा प्रसन्न और स्वस्थ रहने का आशीर्वाद दिया।

मंदिर से बाहर निकल कर हमलोग सीधे मंदिर के पिछवारे बगीचे में गये, वहां वह आदमी हमारी प्रतीक्षा कर रहा था, जिसके हाथ में बहू ने मंदिर में प्रवेश के पहले आम का बिरवा सौंपा था।

उसने पहले से नियत जगह पर गढ़ा खोद रखा था, बेटा-बहू ने मिलकर ,गढ़े में पानी दिया, खाद वाली मिट्टी डाली और आम के बिरवे को भगवान का नाम लेकर रोप दिया, उस डंडे को भी बगल में ही गाड़ दिया, जिस पर पेन्ट से उन दोनो का नाम लिखा हुआ था, फिर वह आदमी लोहे की बड़ी सी जाली को पौधे के चारो तरफ बैठाने लगा, और हम लोग घूम -घूम के पिछले साल लगाये गये पौधों को देखने लगे। कुछ देर में हम लोग अपने घर लौट गये।

पिछले पांच साल से हमारे मुहल्ले के कई घरों में शादी की सालगिरह ऐसे ही मनायी जाती है जो हमें बहुत सुख-सन्तोष दे जाती है ।

यह हमारा एक छोटा पर सार्थक प्रयास है ,पर्यावरण को सुरक्षित रखने का ।

****

शंका

शीला ने धीरे से दरवाजे पर दस्तक दी , भीतर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुयी,कॉलबेल दबाया ,कोई आवाज नहीं ।

'शायद लाईन नहीं है'- शीला ने सोचा और दो बार दरबाजे पर जोर से दस्तक दी।' कौन है'- इसबार बेला का स्वर उभरा, 'अरी खोल न मैं हूं, शीला' । गर्मी से परेशान शीला जल्दी से बोल पड़ी । बेला ने दरबाजा खोलते हुये कहा -'बिजली तो दोपहर से ही नहीं है ,शायद कहीं कुछ गड़बड़ है या फिर कुछ नया बनाने के लिये काट दिया है।'

'चल तुम्हारे बेडरूम में बैठते हैं, वहां कुछ ठंढ होगी 'शीला बोली।

'नहीं -नहीं पिछवाड़े में कुर्सी निकालते हैं' कहते हुये बेला ने वहां पड़ी बेंत की कुर्सी उठा ली, दूसरी कुर्सी शीला ने उठाई, और दोनो सहेलियां पिछवाड़े बने किचेनगार्डेन के खुले जगह में जा बैठी ।अपने स्वभाव के विपरीत बेला चुप रही, शीला देख रही थी बेला का चेहरा भी उदास और उतरा-उतरा सा था। ' क्या बात है बेला इतनी उदास क्यूं हो?' शीला ने हाथ पकड़ते हुये बेला से पूछा, बेला ने कुछ जबाब नहीं दिया,लेकिन उसकी आंखे छल-छला गयी ।

'अरे,तुम तो रो रही हो! क्या बात है अपने बचपन की सहेली को भी नहीं बताओगी, ये तो संयोग ही है न कि हम दोनो सहेलियों के पति एक ही शहर में पास-पास ही घर ले कर रहते हैं । सोच तो कितनी राहत मिलती है हम दोनों को, सुख-दुख की बातें एक दूसरे से कर लेते हैं, आपस में सलाह -मशवरा करते हैं, शॉपिंग करते हैं, फिल्में देखते हैं, आज तुम रो क्यों रही हो कुछ बताती नहीं ।'

'क्या बोलूं, कुछ समझ नहीं आता ,और नहीं बोले रहा भी नहीं जाता , मन में बार- बार संदेह होता है कि मुझसे छिपा कर रमेश अपने भाईयों और मां से क्या बातें करते रहते हैं फोन पर , मेरे अचानक पहुंच जाने से बातें बदल क्यों देतें हैं या चुप क्यों हो जाते हैं । क्या मेरी शिकायत करते हैं उन लोगों से .....'कहते हुये एक बूंदआंसू बेला के गालों पर ढुलक गया।

पागल है तू जो ऐसा सोचती है , इतना मानते हैं तुझे रमेशजी, तुम्हारी सारी इच्छायें पूरी करते हैं, कोई बन्दिश नहीं है तुम पर, और तुम ऐसा सन्देह करती हो। करने दो उनको अपनी मन की बातें अपनी मां से, भाईयों से, तुम भी तो अपनी मां से, बहन से दिल खोल कर बातें करती हो ,क्या वे सुनने आते हैं, नहीं न, फिर तुम क्यों ऐसा सोचती हो ।ये गलत है जो पति-पत्नी के रिश्ते को कटु बनाती है, थोड़ा सा स्पेस तो पति-पत्नी के बीच रहना ही चाहिये।' इतना कह कर शीला चुप हो गयी ।

बेला भी अब शान्त थी , उसका मन का गुबार निकल चुका थाऔर शीला की बातों ने उसे सोचने को मजबूर भी कर दिया था ।शंका की बदली हट रही थी ।

****

कर्मफल

'मामीजी फिर जल्दी ही आईये'-बहू ने अपनी मामी सास का पैर छूते हुयेे कहा।

'हां, बहू मैं कोशीश करूंगी जल्दी आने का , दीदी को देख कर अच्छा लगा कि तुम इतनी सेवा करती हो।'- रमा ने अपना बैग उठाया,और तकिये के सहारे बिस्तर पर अध-लेटी बड़ी ननद का पैर छूकर प्रणाम करते बोली '-अभी चलती हूं दीदी आप जल्द ही एकदम ठीक हो जायेंगी।'

सरिता के चेहरे पर हल्की मुस्कान आ गयी, अस्पष्ट स्वर में कुछ कहकर दाहिना हाथ हल्के से आशीर्वाद की तरह उठाया और फिर चुप हो कर अपनी छोटी भाभी रमा को जाते देखती रही ।

इधर रमा टैक्सी पर बैठते ही ड्राइवर को पता-ठिकाना बता कर स्वयं बिचारों में खो गयी --- वह सदा से ही अपने आप को खूबसूरत और बहुत ही स्मार्ट समझती रही, वह थी भी खूबसूरत और शायद स्मार्ट भी, तभी तो ससुराल आते ही सभी पर अपनी धाक जमा ली। रमा के पति विजय दो भाई-बहन हैं। सरिता बड़ी और विजय छोटे, घर में बूढ़े माता-पिता थे। विजय किसान परिवार से थे । पढ़- लिख कर अच्छी सरकारी नौकरी पाकर अफसर बन दिल्ली में रहते थे, बहन की शादी हो चुकी थी बहनोई भी अच्छे पद पर दिल्ली में ही थे, लेकिन उनका परिवार बड़ा था, दो भाई और तीन बहन थे, सब अपने घर-परिवार में व्यस्त थे, लेकिन एक -दूसरे की खोज खबर रखते थे। माता-पिता भी साथ ही रहते इधर विजय के माता-पिता शूरू -शूरू में गांव में ही रहते, कभी -कदा बच्चों से मिलने दिल्ली आ जाते, लेकिन जब एक दिनअचानक भयंकर छाती के दर्द से विजय के बापूजी चल बसे, तो वह अपनी मां को अकेले छोड़ नहीं सके । गांव के घर मे ताला लगा वह उन्हे अपने साथ रहने ले आये।

रमा को लगा बृद्धा ,ग्रामीण परिवेश वाली सास को अपने साथ रखने से उसकी स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा दोनो खतरे में पड़ जायगी, लेकिन विजय और उनके बेटा -बेटी बेहद खुश थे। विजय की मां भी सन्तुष्ट थी, बेटा,पोता सब आंखों के सामने थे, बेटी-दामाद भी यदा-कदा बच्चों के साथ मिलने आ जाते ।

सब मिला कर समय अच्छा ही चल रहा था सबका। समय के साथ दोनो भाई-बहन के परिवार के बच्चे बड़े हो गये पढ़-लिख कर अच्छी जगह सेट्ल हो गये,शादी विवाह भी हो गया सब का।

दोनो परिवार की वृद्धायें और अधिक वृद्ध होकर शारीरिक और मानसिक रूप से पूर्णरूपेण बहू पर निर्भर हो गयी थी। सरिता के श्वसुर तो कुछ दिन बीमार होकर स्वर्गीय हो गये पर सास बहुत दिन बीमार रही। सरिता ने बहुत मन से तीन सालों तक उनकी सेवा-सुश्रुषा की,इधर मां भी बीमार थी,समय निकाल कर एक आध घंटे के लिये उनसे भी मिल आती ।

रमा हमेशा सबके सामने अपनी सास की शिकायत करती, किस्मत का रोना रोती कि -उसका सामाजिक जीवन विल्कुल समाप्त हो गया अब तो सारा जीवन इस बुढ़िया की सेवा करते ही बीतेगा । अपनी बेटी बहू को कभी उनके पास बैठने या उनका कुछ करने नहीं देती कि तुम क्यों इस झंझट में पड़ोगी ।

समय के साथ सरिता की सास और मां दोनो ही इस संसार से चली गयी । समय बीतता रहा, अब सरिता भी बृद्धा हो गयी थी, पति तो स्वस्थ थे लेकिन सरिता अस्वस्थ रहने लगी थी,और एक दिन साधारण सर्दी-ज्वर के पश्चात उसे लकबा मार गया। बेटा को जैसे ही खबर मिली सपरिवार मुम्बई से आये, मां को अपने साथ ले जाना चाहा, लेकिन मां, पिताजी जाने को तैयार नहीं हुये, तो पत्नी और साल भर के बेटे को दिल्ली में छोड़ बेटा काम पर चला गया। बहू ने सारी व्यवस्था की,चिकित्सा की उचित व्यवस्था के साथ ही पूरे समय के लिये एक परिचारिका भी रखी,और स्वयं अपनी आंखों के सामने मुस्तैदी से सारा काम करवाती ।

छोटा बच्चा था, वृद्ध श्वसुर थे, पति महिने में एक-दो बार मुम्बई दिल्ली करता था,लेकिन बहू बिना किसी शिकायत के अपने काम में लगी रहती थी ,और अब तो सरिता की स्थिति में काफी सुधार था।

आज रमा आयी थी ननद को देखने।विजय तो बराबर आते थे बहन को देखने और घर जाकर तारीफ भी करते थे,बहू की । लेकिन रमा को विश्वास ही नहीं होता कि इतने बड़े बिजनेसमैन की बेटी, बड़े अफसर की पत्नी सब कुछ छोड़ कर सास की इतनी सेवा कर सकती है , उसकी अपनी बहू तो कभी खुशी -खुशी मिलने भी नहीं आती। आंखों से देखकर विश्वास करना ही पड़ा रमा को,मन में उठा ,इसी को कहते हैं--- **'कर्मफल'** । इस संसार का किया अच्छा-बुरा सब यहीं भोग कर जाता है आदमी।रमा ने एक गहरी सांस ली ,और तब तक टैक्सी भी रूक चुकी थी, रमा का घर आ गया था ।

****

व्यक्तित्व दर्पण

नाम	- माधुरी मिश्रा
जन्मतिथि	- 20/10/1945
शिक्षा	- एम.ए.(समाज शास्त्र)
वर्तमान पता	- आर.बी.5, 346 ए. पचपेढ़ी, जबलपुर (मध्यप्रदेश)
मो.नं.	- 9669017285
ई मेल	- madhuri201044@gmail.com
विद्या	- गद्य
प्रकाशन	- मैथिली पत्रिका 'मिथिलामिहिर' में।
प्रसारण	- आकाशवाणी पटना, दरभंगा एवं जबलपुर से अनेक वार्तायें प्रसारित।
लेखन का उद्देश्य	- स्वान्त: सुखाय एवं सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

Women आवाज़ आधी आबादी की गूँज...
www.WomenAawaz.com

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

978-93-88102-06-3

मूल्य- 40/-

१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१, संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com